कश्मीरियत का स्वर

प्रो. विनोद कुमार तनेजा

एक जमाना था, जब कश्मीर त्रिकदर्शन अथवा शैव-दर्शन के लिए जाना जाता था। अभिनवगुप्त का मानना है कि आनंद ही आत्मा का ऐश्वर्य है तथा सृष्टि का परम तत्व है। वह अनादि है, सनातन है, उसकी उत्पत्ति नहीं होती, अभिव्यक्ति होती है। बाद में जब कश्मीर में सूफीसन्तों का अभ्युदय हुआ तो उनकी वाणी में भी यह स्वर गूँजता रहा। यहाँ हम कश्मीर के संस्कृत साहित्य की बात नहीं कर रहे, जो भारतीय-संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय है। अभिनवगुप्तपाद, कल्हण, विल्हण, शितिकंठ, नागार्जुन, कुमारजीव, गुणाढ्य, लगध, चरक, विष्णुशर्मा, भामह, आनन्दवर्द्धन, मम्मट, पुष्पदन्त, शंकुक, कुन्तक, नागसेन, वाग्भट, वसुगुप्त, सोमानन्द, भट्टनायक, मेधातिथि, शार्ङ्गदेव आदि। यहाँ हम कश्मीर के बौद्धदर्शन साहित्य की भी बात नहीं कर रहे। पहली शताब्दी में कनिष्क ने यहाँ बौद्ध-संगीति का आयोजन किया था। यहाँ तो बात कश्मीरी-साहित्य की है। कश्मीर के उस मूलस्वर की है, जिसने सूफीसन्तों को भी प्रभावित किया था, हालाँकि आज की तो बात ही बदल गयी है। आज तो वह स्वर कश्मीर से ही विस्थापित हो चुका है लेकिन वे कश्मीरी देश या विदेश में जहाँ जहाँ भी हैं, उनके व्यष्टि और समष्टिजीवन में वह स्वर जिजीविषा का स्वर है ! प्रकाश और प्रेरणा का स्वर है। कश्मीरियत का स्वर है और कश्मीरियत के इस स्वर का नाम है >> ललद्यद अथवा लल्लेश्वरी ! ललद्यद के वाख पन जन हरान पोहनि बावलाह न्यषबोद आख वुछुम वाजस मारान तन लल बो प्रारान छयन्यम ना प्राह ! जैसे शरद ऋतु में पत्ते सूख कर गिर जाते हैं, उसी प्रकार से जब से मैंने बुद्धिमान को भूख से मरते देखा है, जब से मैंने एक सूपकार [कुशल शिल्पी] को मूर्ख व्यक्ति से पिटते देखा है ! बस, तभी से मैं सांसारिक-मोह छूटने का इन्तजार कर रही हूँ ! कश्मीरियों के घर-परिवार में ललद्यद के वाख उसी प्रकार से प्रचलित हैं, जिस प्रकार हिन्दी-प्रदेशों में कबीर और तुलसी आदि की वाणी! ललद्यद के वाख कश्मीरी लोकमानस की वाणी है, सम्मानित और प्रामाणिक ! शेख नूरुद्दीनवली अथवा नुन्दऋषि जिन्हें कश्मीर में ऋषिपंथ का प्रवर्तक माना जाता है , लल्लेश्वरी के ही शिष्य थे।

इनके अतिरिक्त अन्य सूफी कवियों के काव्य में भी लल्लेश्वरी के वाखों का व्यापक प्रभाव स्पष्ट है ! ललद्यद का जन्म श्रीनगर के पास के गाँव में सन् १३३५ में हुआ ! उस समय के रिवाज के अनुसार बहुत कम उम्र में ही ललद्यद का विवाह हो गया। ससुराल में ललद्यद को प्रताड़ना सहनी पड़ी और उस पीड़ा ने ललद्यद को बाहर के जगत से अन्तर्जगत की यात्रा की ओर मोड़ दिया !

ललद्यद ने सेदबोय से शैव-दीक्षा ली और अध्यात्म में रम गयी ! पति ने ललद्यद को पहचाना तो था लेकिन तब पहचाना जब वे सांसारिकता का अतापता भूल चुकी थीं ! डॉ. अद्वैतवादिनीकौल (पूर्वविभागाध्यक्ष कलाकोश IGNCA) ने उनके वाखों का पद्यानुवाद किया है और एक प्रसिद्ध गायिका ने उन्हें संगीतबद्ध किया

है ! उल्लेखनीय है कि ललद्यद के वाख उनके समय से लेकर १९ वीं शताब्दी तक कश्मीर के लोकजीवन की वाचिक-परंपरा में ही प्रचलित रहे १९ वीं शताब्दी में देश और विदेश के अध्येताओं का ध्यान इस वाचिक-परंपरा की ओर गया तथा उन्हें लिखित रूप प्रदान किया गया!